IJFANS INTERNATIONAL JOURNAL OF FOOD AND NUTRITINAL SCINCES
ISSN PRINT 2319 1775 Online 2320 7876
Research Paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved UGC CARE Listed (Group -I) Journal Volume 10, Iss 08, 2021

खनिज संसाधन और जनजातीय समुदाय: झारखंड में खनन के प्रभावों का अध्ययन

शरद कुमार यादव
सहायक प्राध्यापक
राजनीति विज्ञान विभाग, शहीद भगत सिंह सांध्य महाविद्यालय
दिल्ली विश्वविद्यालय

प्रस्तावना

स्वतंत्रता के पश्चात, भारत ने खनिजों को राष्ट्रीय विकास की आधारशिला मानते हुए औद्योगीकरण को बढ़ावा दिया। परिणामस्वरूप, खनिज क्षेत्र भारतीय अर्थव्यवस्था का एक प्रमुख घटक बना। औद्योगीकरण के प्रसार के साथ झारखंड, छत्तीसगढ़, उड़ीसा, मध्य प्रदेश और कर्नाटक जैसे खनिज-समृद्ध अंचलों में व्यापक स्तर पर खनन कार्य आरंभ हुए। लिहाजा, राष्ट्रीय विकास और सार्वजनिक हित के लिए झारखंड, छत्तीसगढ़, उड़ीसा, मध्य प्रदेश और कर्नाटक जैसे खनिज-समृद्ध राज्यों में खनन गतिविधियाँ तेजी से बढ़ीं। परिणामस्वरूप, भारत के औद्योगिक विकास के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए इन जनजातीय बहुल क्षेत्रों को खनिज और कच्चे माल के स्रोत के रूप में देखा गया। इस प्रकार, ये कल तक उपेक्षित और दुर्गम क्षेत्र नई आर्थिक-औद्योगिक गतिविधियों का केंद्र बन गए। इसने इन क्षेत्रों में कथित आधुनिकीकरण का मार्ग प्रशस्त हुआ और कई खनन परियोजनाएँ शुरू की गईं। लेकिन इस औद्योगिक विकास यात्रा में दो प्रमुख चुनौतियाँ उत्पन्न हुईं। पहली, पारिस्थितिकीय क्षरण, जिसमें पर्यावरणीय प्रदूषण, वनोन्मूलन और जैव विविधता का ह्रास शामिल है। दूसरी, बड़े पैमाने पर विस्थापन, जिसके कारण लाखों लोग अपने घरों से बेघर हुए और अकुशल श्रमिकों के रूप में काम करने को मजबूर हुए हैं[1]। यह विडंबनापूर्ण है कि जिन क्षेत्रों में अमूल्य खनिज संपदा पाई जाती है, वहां के जनजातीय समुदाय मूलभूत सुविधाओं से वंचित रहे हैं। यह लेख इसी विरोधाभास को उजागर करने पर केंद्रित है और खनिज संपन्न क्षेत्रों में निवासरत लोगों के लिए विकास का क्या अर्थ है, इस पर विचार करता है। साथ ही, यह लेख इन क्षेत्रों में समावेशी और संधारणीय विकास के लिए विभिन्न उपायों की भी चर्चा करता

[1]बाविस्कर, अमिता. (1999). इन द बेली ऑफ द रिवर: ट्राइबल कॉन्फ्लिक्ट ओवर डेवलपमेंट इन द नर्मदा वैली. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.

IJFANS International Journal of Food And Nutritional Sciences
Official Publication of International Association of Food and Nutrition Scientists

है। सुविधानुसार, लेख को छह भागों में विभाजित किया गया हैं। पहले भाग में लेख की भूमिका स्पष्ट की गई है। दूसरे भाग में संसाधन वरदान अथवा अभिशाप के सैद्धांतिक संदर्भ में विश्लेषित किया गया है। इस विश्लेषण से यह समझने का प्रयास किया गया है कि यह सिद्धांत प्राकृतिक संसाधनों से समृद्ध क्षेत्रों में विकास के पैटर्न को कैसे प्रभावित करता है। विकास प्रक्रिया, खनिज उद्योग और जनजातीय समुदाय के बीच के संबंधों का गहराई से अध्ययन लेख के तीसरे भाग में किया गया है। चौथे भाग में भारत में खनन नीति, पर्यावरण संरक्षण कानून और अन्य प्रासंगिक कानूनों की संक्षिप्त समीक्षा की गई है। पाँचवें भाग में झारखंड में खनन और उसके जनजातीय समुदाय पर प्रभाव का विस्तृत अध्ययन किया गया है। अंत में, निष्कर्ष और सुझाव के तौर पर सतत और समावेशी विकास के लिए नीतिगत सुझाव पेश किए गए हैं।

खनिज संसाधन वरदान या अभिशाप?: सैद्धांतिक विमर्श

किसी भी देश का सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक विकास उसके प्राकृतिक संसाधनों से अत्यधिक प्रभावित होता है। ये संसाधन देश के विकास में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हुए, कभी-कभी सकारात्मक तो कभी-कभी नकारात्मक प्रभाव भी डालते हैं। प्राकृतिक संसाधनों के लाभ और हानियों को लेकर अकादमिक जगत में लगातार बहस चलती रही है। कुछ विद्वानों का तर्क है कि प्राकृतिक संसाधन लोगों के जीवन स्तर को बढ़ाने के लिए आवश्यक हैं। खनन क्षेत्र और अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थान (IFI) का तर्क है कि वे विकास को बढ़ावा देते हैं[2] और दावा करते हैं कि खनन से धन और रोजगार पैदा होते हैं, सरकारों को कर राजस्व मिलता है और गरीबी कम करने के अवसर पैदा होते हैं[3]। इसके विपरीत, कुछ विद्वानों का मानना है कि प्रचुर मात्रा में प्राकृतिक संसाधन स्थानीय समुदायों के लिए बोझ बन सकते हैं। नाइजीरिया, कांगो लोकतांत्रिक गणराज्य और वेनेजुएला जैसे प्राकृतिक संसाधनों से समृद्ध देशों ने अपेक्षाकृत कम आर्थिक विकास और जीवन स्तर का अनुभव किया है। इसके विपरीत, दक्षिण कोरिया,

[2] व्हिटमोर, ए. (2006). द एम्परर'स न्यू क्लोथ्स: सस्टेनेबल माइनिंग? जर्नल ऑफ क्लीनर प्रोडक्शन, 14, 309-314. DOI:10.1016/j.jclepro.2004.10.005

[3] लिटलवुड, डी. (2014). 'कर्स्ड' कम्युनिटीज? कॉर्पोरेट सोशल रिस्पॉन्सिबिलिटी (CSR), 286 कंपनी टाउन और नामीबिया में माइनिंग इंडस्ट्री. जर्नल ऑफ बिजनेस एथिक्स, 120, 39-63. DOI:10.1007/s10551-013-1649-7

ISSN PRINT 2319 1775 Online 2320 7876
Research Paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved UGC CARE Listed (Group -I) Journal Volume 10, Iss 08, 2021

हांगकांग, सिंगापुर और ताइवान जैसे देशों ने कम प्राकृतिक संसाधनों के बावजूद महत्वपूर्ण आर्थिक विकास हासिल किया है। रिचर्ड ऑटी 1993 में "संसाधन अभिशाप" शब्द को गढ़ने वाले पहले व्यक्ति थे[4]। उनके बाद, जेफरी सैक्स, एंड्रयू वार्नर, फिलिप लेन और आरोन टॉर्नेल जैसे शोधकर्ताओं ने इस अवधारणा की विस्तृत व्याख्या किया है[5]। फिर भी, संसाधन अभिशाप की एक सार्वभौमिक रूप से स्वीकृत परिभाषा मौजूद नहीं है। आम तौर पर, संसाधन-समृद्ध देशों में अर्थव्यवस्थाओं के खराब प्रदर्शन को संसाधन अभिशाप का एक उदाहरण माना जाता है। भारतीय संदर्भ में खनिज संसाधन के खनन गतिविधियों के सामाजिक-आर्थिक और पर्यावरणीय प्रभावों पर कई अध्ययन हुए हैं। इन अध्ययनों ने मुख्य रूप से भूमि अधिग्रहण, विस्थापन, पुनर्वास और मुआवजे जैसे मुद्दों पर केंद्रित है[6]। इसके अलावा, इन अध्ययनों में खनन के कारण होने वाले पर्यावरणीय प्रभावों[7] और बाल श्रम और महिलाओं के अनुभवों[8] के साथ ही स्वास्थ्य और रोजगार संबंधी मुद्दों पर भी विश्लेषण किया गया है[9]। खनिज संसाधन वरदान या अभिशाप? विमर्श को झारखंड में जनजातीय समुदायों के परिप्रेक्ष्य में, विस्तृत रूप से लेख के पाँचवे भाग में परीक्षण किया गया है।

विकास प्रक्रिया, खनिज उद्योग एवं जनजातीय समुदाय: अंतर्संबंधों की पड़ताल

आजादी के बाद, देश की विशाल जनसंख्या के समक्ष सीमित संसाधनों और लचर आर्थिक संरचना जैसी चुनौतियां विद्यमान थी। ऐसे में आर्थिक विकास के लिए एक नए दृष्टिकोण की तत्काल आवश्यकता थी। इसीलिए, देश ने औद्योगीकरण के माध्यम से आधुनिकीकरण का रास्ता चुना। जिसका लक्ष्य तर्कसंगत शासन, बचत को बढ़ावा देना और औद्योगिक विकास को गति देना था। इस महत्वाकांक्षी प्रयास ने लोगों में आशा जगाई और उन्हें एक बेहतर भविष्य का सपना दिखाया। यह विश्वास था कि योजनाबद्ध विकास के माध्यम से हर व्यक्ति राष्ट्र निर्माण में योगदान

[4] ऑटी, आर. (1993). सस्टेनिंग डेवलपमेंट इन मिनरल इकॉनमिज: द रिसोर्स कर्स थेसिस. राउटलेज, लंदन.
[5] सैक्स, जे. डी., & वॉर्नर, ए. एम. (1995). नेचुरल रिसोर्स अबंडेंस एंड इकोनॉमिक ग्रोथ (एनबीईआर वर्किंग पेपर नं. 5398). नेशनल ब्योरो ऑफ इकोनॉमिक रिसर्च. और लेन, पी. आर., & टॉर्नेल, ए. (1996). पावर, ग्रोथ, एंड द वोरसिटी इफेक्ट. *जर्नल ऑफ इकोनॉमिक ग्रोथ*, 1(2), 213-241.
[6] भूमि अधिग्रहण और विस्थापन पर विस्तृत अध्ययन के लिए फर्नांडीस और राज (1992), भेंगारा (1996), अरिपारम्पिल (1996), फर्नांडीस और आसिफ (1997), कल्शियन (2007), सीएसई (2008), फर्नांडीस (2007) देखें।
[7] पर्यावरणीय प्रभावों पर सिंह (2005), फर्नांडीस (2007), कल्शियन (2007), सीएसई (2008) का अध्ययन विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।
[8] बाल खनिकों के अनुभवों के लिए पति (2013) देखें।
[9] स्वास्थ्य और रोजगार पर अध्ययन के लिए हर्बर्ट और लाहिड़ी-दत्त (2004), फर्नांडीस (2007), सीएसई (2008) देखे.

देगा और एक समृद्ध जीवन का अनुभव करेगा।[10] नब्बे के दशक तक, खनन कार्यों को मुख्य रूप से सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों द्वारा नियंत्रित किया जाता था, और विदेशी स्वामित्व 40% तक सीमित था। भारतीय राज्य की खनिज उत्खनन के प्रति नीति रूढ़िवादी थी। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में प्राकृतिक संसाधनों को एक बार खत्म होने वाले संसाधन के रूप में देखा गया था। योजना के अनुसार, खनिजों का एक बार उत्खनन होने पर वे हमेशा के लिए समाप्त हो जाते हैं।

ऐतिहासिक रूप से वर्चस्वशाली स्थिति में रहे भूस्वामी, उद्योगपति वर्ग और उच्च वर्गों ने लोकतांत्रिक राज्य व्यवस्था को अपने हितों के अनुकूल ढालने और विकास के लाभों को हड़पने के लिए राज्य पर लगातार दबाव डालते रहे हैं।[11] इस प्रकार इन शक्तियों ने लोकतांत्रिक संस्थाओं और विकास संबंधी एजेंडा के उद्देश्यों को विकृत भी किया। [12] हालाँकि जनजाति विकास के संबंध में प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने 1958 में जनजातियों के विकास के लिए पंचशील सिद्धांत दिए थे। इन सिद्धांतों का वर्णन जाने-माने मानवशास्त्री वेरियर एलविन ने अपनी पुस्तक 'ए फिलांसफी ऑफ़ नॉर्थ-ईस्टर्न फ्रंटियर एरिया (नेफ़ा की प्रस्तावना में) दिया था। ये सिद्धांत निम्नलिखित हैं, जनजाति समुदायों के सतत विकास के लिए एक बहुआयामी दृष्टिकोण की आवश्यकता है। उन्हें अपनी प्रतिभाओं को निखारने और अपनी कला एवं संस्कृति को संरक्षित करने का अवसर प्रदान करना चाहिए। उनके भूमि और वन अधिकारों का सम्मान करते हुए, उन्हें स्थानीय स्तर पर प्रशासन में भाग लेने के लिए सशक्त बनाना चाहिए। बाहरी हस्तक्षेप को कम करते हुए, उनके सामाजिक और सांस्कृतिक संस्थानों को मजबूत करना चाहिए। विकास का आकलन केवल आर्थिक सूचकांकों से नहीं, बल्कि मानवीय विकास के संदर्भ में किया जाना चाहिए। [13]

[10] दुबे, अभय. (2017). भारत का भूमंडलीकरण. वाणी प्रकाशन: दिल्ली.
[11] प्रणब,बर्धन.(1992) ए पॉलिटिकल इकॉनमी पर्सपेक्टिव ऑन डेव्लपमेंट इन बिमल जलान (स०)इंडियन इकॉनमी: प्रॉब्लम्स एंड प्रोस्पेक्ट, पेंग्विन,नई दिल्ली पृ.325
[12] पूर्वोक्त
[13] सेन, राहुल. (1992). ट्राइबल पॉलिसी ऑफ इंडिया. *इंडियन एंथ्रोपोलॉजिस्ट*, 22(2), 77-89.

ISSN PRINT 2319 1775 Online 2320 7876
Research Paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved UGC CARE Listed (Group -I) Journal Volume 10, Iss 08, 2021

लेकिन आजादी के बाद अपनाए गए केंद्रीकृत-तार्किक-नौकरशाही नियोजन और औद्योगीकृत विकास पर आधारित विकास मॉडल में सामाजिक और सांस्कृतिक कारकों तथा स्थानीय समुदायों की भागीदारी को नज़रअंदाज किया गया। अमित प्रकाश के अनुसार, इस मॉडल को पिछड़े क्षेत्रों और जनजातियों की विशिष्ट आवश्यकताओं के अनुरूप ढालना बेहद मुश्किल था। परिणामस्वरूप, स्थानीय समुदाय सक्रिय भागीदार होने के बजाय, राज्य की विकासात्मक नीतियों के निष्क्रिय लाभार्थी बन गए। यद्यपि पंचशील सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए, जनजाति विकास कार्यक्रमों को विभिन्न योजनाओं में शामिल करने की सिफारिश की गई थी, किंतु यह विकास मॉडल इन सिद्धांतों के अनुरूप नहीं था।[14] आगामी दशकों में ही यह स्पष्ट होने लगा है कि राज्य एक स्वतंत्र कारक नहीं रह गया है। समाज के सामाजिक-आर्थिक रूपांतरण के एजेंडों को उन्हीं शक्तियों ने निष्प्रभावी बना दिया जिनके विरुद्ध इसकी योजना बनाई गई थी। इस विनाशकारी और असमान विकास ने झारखंडियों को आंदोलन के लिए प्रेरित किया।

दरअसल, अस्सी के दशक तक, भारत का विकास मुख्यतः राज्य के नेतृत्व वाले आयात प्रतिस्थापन मॉडल पर आधारित था। इस मॉडल का उद्देश्य स्वदेशी उद्योगों को बढ़ावा देना और विदेशी उत्पादों पर निर्भरता कम करना था।[15] हालांकि, 1980 के दशक में, भारत ने आर्थिक विकास को प्राथमिकता देते हुए भारतीय पूंजी को बढ़ावा देने की नीति अपनाई। यह एक महत्वपूर्ण मोड़ था, जिसे 'समाजवादी भारत' से 'व्यापारिक भारत' की ओर उन्मुख होने के रूप में देखा जा सकता है। लेकिन, 1980 के दशक के उत्तरार्द्ध में वृहद स्तरीय आर्थिक असंतुलन के कारण एक नई तरह की राजनीतिक और आर्थिक अस्थिरता उत्पन्न हुई। विदेशी ऋण, सरकारी बजट घाटा, मुद्रास्फीति और विदेशी भुगतान संतुलन बिगड़ने से यह स्थिति और गंभीर हो गई। इस संकट के समाधान के लिए, 1991 में सोवियत संघ के विघटन और उदारीकरण के दौर में, भारतीय सरकार को अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष की शर्तों के तहत संरचनात्मक समायोजन कार्यक्रम लागू करना पड़ा। हालांकि, ये सुधार विशिष्ट वर्गों को अधिक लाभान्वित हुए, जबकि आम जनता का ध्यान अन्य मुद्दों पर केंद्रित रहा। ये सुधार कुलीनों के लिए अवसरों के द्वार खोलते हुए आम जनता पर सीमित प्रभाव डाल

[14] प्रकाश, अमित. (2001). *झारखंड पॉलिटिक्स ऑफ डेव्लपमेंट: आईडिंटिटी*. (पृ. 228).
[15] कोहली, अतुल. (2006). पृ. 1253.

ISSN PRINT 2319 1775 Online 2320 7876
Research Paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved UGC CARE Listed (Group -I) Journal Volume 10, Iss 08, 2021

सके।[16]1990 के दशक में, विकास की राजनीतिक अर्थव्यवस्था नेहरूवादी प्रतिमान से नवउदारवादी बाजार प्रतिमान की ओर एक महत्वपूर्ण बदलाव देखने को मिला। इस बदलाव के परिणामस्वरूप, विकास के प्रतिमान और प्रक्रिया में मौलिक परिवर्तन हुए। राज्य ने आर्थिक वृद्धि और वैश्विक बाजार की मांगों को पूरा करने के लिए पारिस्थितिक तंत्र में आर्थिक पूंजी का निवेश करना शुरू कर दिया। अल्पकालिक लाभ और वृद्धि प्राप्त करने की चाहत में, पारिस्थितिक तंत्र में व्यापक परिवर्तन किए गए। आशुतोष वार्ष्णेय (1998) के अनुसार, इस प्रकार के विकासवादी राज्य के स्वरूप ने उन समुदायों पर गहरा प्रभाव डाला है जिनका उत्पादन और सामाजिक संबंध पूंजीवादी नहीं थे। विकास के इस हस्तक्षेप के कारण, दक्षिणी दुनिया में कई गैर-पूंजीवादी समुदाय आर्थिक और सांस्कृतिक रूप से अपने लिए जगह बनाने के लिए संघर्ष करते रहे हैं। ऐसी स्थिति में, राज्य पूंजीवादी बाजार अर्थव्यवस्था का एक संरक्षक बन जाता है और मुख्य रूप से एक विशिष्ट वर्ग के हितों की सेवा करने के लिए राज्य द्वारा संचालित आधुनिकीकरण के एजेंडे को आगे बढ़ाता है।[17]

यह विशेष रूप से जनजाति समुदायों के लिए चिंताजनक है। इन समुदायों का जीवन जल, जंगल और जमीन जैसे प्राकृतिक संसाधनों पर आधारित है। समुदायिकता, समानता और स्वतंत्रता इनके प्रमुख मूल्य हैं। इन्होंने सदैव प्राकृतिक संसाधनों का अपने आवश्यक उपयोग के लिए किया है, न कि निजी लाभ के लिए। लेकिन नवउदारवादी दौर में राज्य, प्राकृतिक संसाधनों को आर्थिक विकास के नाम पर भारी मुनाफा कमाने के साधन के रूप में देखता है। इस दृष्टिकोण के कारण, जनजाति समुदायों के पारंपरिक जीवन और उनके प्राकृतिक अधिकारों पर गहरा असर पड़ा है।

खनिज संबंधित नीति एवं क़ानून;

भारत का खनिज क्षेत्र मुख्य रूप से 1952 के खान अधिनियम और 1957 के खनिज और खनिज विकास (संशोधन) अधिनियम (एमएमडीआर) द्वारा नियंत्रित किया जाता है। इन अधिनियमों में समय-समय पर संशोधन किए गए हैं

[16] वार्ष्णेय, आशुतोष. (1998). मास पॉलिटिक्स और इलीट पॉलिटिक्स? इंडियाज़ इकोनॉमिक रिफॉर्म्स इन कंपैरेटिव परस्पेक्टिव. *पॉलिसी रिफॉर्म जर्नल*, 2(4), 301-335.

[17] पूर्वोक्त

ISSN PRINT 2319 1775 Online 2320 7876
Research Paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved UGC CARE Listed (Group -I) Journal Volume 10, Iss 08, 2021

ताकि उन्हें सतत विकास के सिद्धांतों के अनुरूप बनाया जा सके। 1970 के दशक से, भारत ने विभिन्न पर्यावरणीय नियमों को लागू किया है, जैसे कि 1974 का कोयला खान (संरक्षण एवं सुरक्षा) अधिनियम और जल, वायु और वन संरक्षण अधिनियम, ताकि खनन गतिविधियों के पर्यावरणीय प्रभावों को कम किया जा सके। 2006 की राष्ट्रीय पर्यावरण नीति प्राकृतिक संसाधनों के सतत प्रबंधन और अंतर-पीढ़ीगत न्याय पर जोर देती है।

खनन गतिविधियों के पर्यावरणीय प्रभावों को कम करने के लिए, भारत ने पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन (ईआईए), वन संरक्षण कानून और प्रदूषण नियंत्रण के लिए दिशानिर्देश लागू किए हैं। सतत रेत खनन दिशानिर्देश पर्यावरण-अनुकूल खनन प्रथाओं को बढ़ावा देते हैं। 2015 में, एमएमडीआर अधिनियम में संशोधन किया गया और अनवरुल होदा समिति की सिफारिशों के आधार पर एक सतत विकास ढांचा (एसडीएफ) और जिला खनिज फाउंडेशन (डीएमएफ) की स्थापना की गई। डीएमएफ का उद्देश्य खनन प्रभावित क्षेत्रों में सतत विकास और लाभ साझा करना है। 1993 की राष्ट्रीय खनिज नीति, जिसे 2008 और 2019 में संशोधित किया गया था, सतत खनन, अंतर-पीढ़ीगत न्याय और सार्वजनिक विश्वास के सिद्धांतों पर आधारित है। हाल के नीतिगत बदलावों ने खनिज उत्पादन और निष्कर्षण को बढ़ावा दिया है, साथ ही साथ सतत विकास को भी बढ़ावा दिया है।

झारखंड में जनजातीय जीवन पर खनन का प्रभाव

झारखंड खनिज संपदा की दृष्टि से देश का सबसे समृद्ध राज्य है और भारत की औद्योगिक प्रगति का मेरुदंड माना जाता है। इतनी असीम क्षमता के बावजूद, यह एक कड़वा सच है कि यहां के स्थानीय निवासी, खासकर जनजाति समुदाय आजादी के इतने साल बाद भी गरीबी और पिछड़ेपन का जीवन जी रहे हैं।[18] झारखंड को अलग राज्य बनाने के संघर्ष का मूल उद्देश्य एक ऐसा राज्य स्थापित करना था जहां वन और खनिज संसाधनों पर जनजातियों का मालिकाना हक और प्रभुत्व हो। परंतु, विकास के नाम पर झारखंड में अंधाधुंध औद्योगीकरण, खनन गतिविधियों और अन्य परियोजनाओं के कारण जनजाति समुदाय की सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक स्थिति लगातार बिगड़ती

[18] विद्या, भूषण. (2000). *झारखंड समाज, संस्कृति और विकास*. प्रकाशन संस्थान. नई दिल्ली.

ISSN PRINT 2319 1775 Online 2320 7876
Research Paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved UGC CARE Listed (Group -I) Journal Volume 10, Iss 08, 2021

गई। नीति आयोग के ताजा बहुआयामी गरीबी सूचकांक 2021 के अनुसार, झारखंड गरीबी के मामले में देश में दूसरे स्थान पर है। रिपोर्ट के मुताबिक, राज्य की 42.16% आबादी गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन कर रही है, जो बिहार (51.91%) के बाद देश में दूसरा सबसे बड़ा आंकड़ा है। झारखंड में कुपोषण का स्तर भी काफी उच्च है, लगभग 47.99% आबादी कुपोषण से पीड़ित है। राज्य के ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी का स्तर शहरी क्षेत्रों की तुलना में काफी अधिक है।[19]

2011 की जनगणना के अनुसार, यहां शहरी आबादी केवल 24% है, जो राष्ट्रीय औसत 31% से काफी कम है। बेंगलूरू स्थित पब्लिक अफेयर्स सेंटर के 'गवर्नेंस इन द स्टेट्स ऑफ इंडिया 2016' रिपोर्ट के अनुसार, झारखंड 'महिला और बच्चे' श्रेणी में सभी 29 राज्यों में सबसे नीचे है। झारखंड की प्रति व्यक्ति आय भारत के राज्यों में सबसे कम है। वर्ष 2000-01 में राज्य के गठन के समय से ही यह स्थिति बनी हुई है। 28 राज्यों में से, झारखंड लगातार सबसे निचले पायदान पर रहा है। 2021 में भी यह केवल बिहार, उत्तर प्रदेश और मणिपुर से आगे था।

दरअसल, नब्बे के दशक से वैश्वीकरण के बढ़ते प्रभाव के साथ दुनिया भर में ऊर्जा और कच्चे माल की मांग में जबरदस्त वृद्धि हुई है। पूंजी और वस्तुओं के आवागमन पर लगे प्रतिबंधों में ढील देने से बहुराष्ट्रीय कंपनियां धरती के गर्भ में छिपे खनिजों का दोहन करने के लिए और अधिक स्वतंत्र हो गई हैं।[20] झारखंड में भी कुछ ऐसा ही देखने को मिलता है। सन् 2008 से 2021 के बीच कोयला खनन और अन्य गैर-वन उपयोग के लिए लगभग चौदह हज़ार हेक्टेयर से अधिक वन भूमि का विचलन किया है। खनन भारत में वन विचलन का एक प्रमुख कारण है। एक 2019 के अध्ययन के अनुसार, 300 से अधिक भारतीय जिलों में, कोयला, लोहा या चूना पत्थर का उत्पादन करने वाले जिलों

[19] आयोग, एन. आई. टी. आई. (2021). *नेशनल मल्टीडायमेंशनल पॉवर्टी इंडेक्स–अ प्रोग्रेस रिव्यू 2021*. नई दिल्ली

[20] कल्शियान, आर. (2008). प्रस्तावना. आर. कल्शियान (सं.), *बुलडोजर और महुआ के फूल: भारत के खदानों में उथल-पुथल* (पृ. 4). पनोस साउथ एशिया.

में औसतन 450 वर्ग किलोमीटर अधिक वन का नुकसान हुआ है, तुलना में उन जिलों से जहां इन खनिजों का उत्पादन नहीं होता था।[21]

झारखंड में खनन गतिविधियों का जनजातीय समुदायों पर गहरा प्रभाव पड़ा है। इस प्रभाव का विस्तृत विश्लेषण निम्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से किया गया है

विस्थापन का दर्द

झारखंड में खनन गतिविधियों ने यहां के जनजातीय समुदाय को गहरा आघात पहुंचाया है। विस्थापन इस आघात का सबसे भयानक रूप है। आजादी के बाद से ही झारखंड के लोग अपनी जन्मभूमि और घर छोड़ने को मजबूर हुए हैं। ये बेघर लोग पलायन के लिए विवश हैं, अनिवार्य रूप से मजदूरी करनी पड़ती है और अपनी समृद्ध संस्कृति से भी दूर हो रहे हैं। हालांकि, विस्थापित हुए लोगों की सटीक संख्या का कोई आधिकारिक आंकड़ा उपलब्ध नहीं है, जो इस समस्या की गंभीरता को और अधिक दर्शाता है। एक्का और आसिफ के अध्ययन के अनुसार, 1951 से 1995 के बीच लगभग 16 लाख एकड़ भूमि का अधिग्रहण किया गया था, जिससे लाखों लोग बेघर हो गए[22]। खासकर खनन के लिए, कुल अधिग्रहित निजी भूमि का 21.62 प्रतिशत, सामान्य भूमि का 44.82 प्रतिशत और वन भूमि का 5.06 प्रतिशत अधिग्रहित किया गया था[23]। ये आंकड़े स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि जनजातीय समुदायों के प्रति कितनी उदासीनता रही है, यह इन आंकड़ों से स्पष्ट है। खनन ने न केवल लोगों को विस्थापित किया है, बल्कि पर्यावरण को भी गंभीर रूप से क्षतिग्रस्त किया है। विस्थापित लोगों के पुनर्वास के लिए बनाई गई योजना का सही से क्रियान्वन्यन नहीं किया गया जिसकी वजह से उन्हें न तो पर्याप्त मुआवजा मिला और न ही उन्हें वैकल्पिक रोजगार के पर्याप्त अवसर उपलब्ध कराए गये हैं। परिणामस्वरूप, वे गरीबी और भुखमरी की दहलीज पर जीने को मजबूर हैं।

[21] https://www.sciencedirect.com/science/article/abs/pii/S030142071830401X#preview-section-abstract
[22] एक्का, ए. (2011). स्टेट्स ऑफ़ आदिवासी/इंडिजीनियस , लैंड सीरिज़ -4. आकार बुक्स.
[23] एक्का, ए., और आसिफ, एम. (2000). *डेवलपमेंट इंड्यूस्ड डिस्प्लेसमेंट एंड रेहैबिलिटेशन, झारखंड 1951–1995: ए डेटाबेस ऑन इट्स एक्सटेंट एंड नेचर*. इंडियन सोशल इंस्टीट्यूट.

IJFANS International Journal of Food And Nutritional Sciences
Official Publication of International Association of Food and Nutrition Scientists

ISSN PRINT 2319 1775 Online 2320 7876
Research Paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved UGC CARE Listed (Group -I) Journal Volume 10, Iss 08, 2021

जीविकोपार्जन का संकट

झारखंड में खनन ने न केवल जनजातीय समुदायों को अपनी जमीन और घरों से बेदखल किया है, बल्कि उनके पारंपरिक जीवन और आजीविका को भी बुरी तरह प्रभावित किया है। खेती और वन उत्पादन इन समुदायों की आजीविका का मुख्य आधार रहे हैं, जिस पर बड़ी आबादी निर्भर है। खनन गतिविधियों के कारण न केवल उनकी जमीन और घरों का अधिग्रहण किया गया है, बल्कि उनके पारंपरिक ज्ञान और सांस्कृतिक पहचान को भी नुकसान पहुंचा है। खान कंपनियां स्थानीय लोगों को रोजगार देने का दावा करती हैं, परंतु हकीकत में ज्यादातर रोजगार बाहरी लोगों को मिलते हैं। स्थानीय लोग अक्सर अस्थायी और कम वेतन वाले कामों पर मजबूर होते हैं। कई बार, खानों में महिलाएं, बच्चे और युवा भी काम करते हैं, जिन्होंने अपनी जमीन खो दी है। सीसीएल की एक परियोजना के तहत 95% जनजाति आबादी वाले 14 गांवों को बेदखल कर दिया गया। उन्हें नगद मुआवजे के अलावा कोई अन्य सुविधा नहीं मिली। उनके लिए बना स्कूल बंद पड़ा है और उन्हें कोई बुनियादी चिकित्सा सुविधा भी उपलब्ध नहीं है। विस्थापन के बाद, ये समुदाय अपनी जमीन, घर और आजीविका खो चुके हैं और अब अस्थायी आश्रयों में रहने को मजबूर हैं। [24]

[24] धात्री रिसोर्स सेंटर फॉर वीमेन एंड चिल्ड्रेन सेंटर-समता. (2010). *धूल में लथपथ देश का बचपन: भारत में बच्चों पर खनन उद्योग के प्रभावों का अध्ययन*. विशाखापत्तनम. पृ.23

स्वास्थ पर प्रभाव

झारखंड में खनन गतिविधियों ने जनजातीय समुदायों के स्वास्थ्य पर गंभीर प्रभाव डाला है। जादूगोड़ा में यूरेनियम खनन का उदाहरण इसे स्पष्ट करता है। 1964 से यूसीआईएल द्वारा यहां खनन शुरू होने के बाद, विकिरण के कारण संथाल और मुंडा जनजातियों के स्वास्थ्य पर गंभीर प्रभाव पड़ा है। महिलाओं में बांझपन और विकलांग बच्चों के जन्म की दर बढ़ गई है। कैंसर, टीबी जैसी गंभीर बीमारियां आम हो गई हैं।[25] डायस का दावा है कि जादूगोड़ा में यूरेनियम खनन से स्थानीय लोगों का स्वास्थ्य बुरी तरह प्रभावित हो रहा है। आणविक ऊर्जा विभाग सुरक्षा का दावा करता है, लेकिन वास्तव में रेडियोधर्मी कचरे को लापरवाही से फेंक रहा है। इससे कैंसर और अन्य बीमारियां फैल रही हैं। स्थानीय लोगों का जीवन और पारंपरिक तरीके पूरी तरह से तबाह हो गए हैं। डायस का आरोप है कि विभाग झूठ बोल रहा है और लोगों के साथ धोखा कर रहा है।[26]विस्थापन और प्रदूषण के कारण, इन समुदायों की पारंपरिक जीवनशैली और स्वास्थ्य सुविधाओं तक पहुंच बुरी तरह प्रभावित हुई है। आर्थिक रूप से कमजोर होने के कारण, महिलाओं और बच्चों पर यौन शोषण और संक्रामक रोगों का खतरा बढ़ गया है।[27]

पलायन को मजबूर

खनन गतिविधियों के कारण जनजाति अपनी जमीन और जंगल से विस्थापित हो रहे हैं, जिससे उनकी आर्थिक स्थिति बिगड़ रही है और उन्हें पलायन के लिए मजबूर होना पड़ रहा है।जनजाति क्षेत्रों में बिजली, यातायात, सिंचाई, शिक्षा और स्वास्थ्य जैसी बुनियादी सुविधाओं का अभाव होने के कारण भी लोग अपने गांव छोड़ने को मजबूर होते हैं। खनन क्षेत्रों में पलायन का एक प्रमुख कारण खनन कार्यों की मौसमी प्रकृति है। बाजार में उतार-चढ़ाव और खनिज

[25] वासवी, (2003). *ताबेन जोमन जमीन का हिस्सा*. हरियाणा: आधार प्रकाशन. पृ.
[26] डायश, ज़ेवियर. (साल). पीली खल्ली काली करतूत. इन आर. कल्शियान (सं.), बुलडोजर और महुआ के फूल: भारत के खदानों में उथल-पुथल (पृ. 135). पनोस साउथ एशिया.
[27] साबू, एस. (2009). माइन वर्कर्स प्रोन टू एड्स. *टेलीग्राफ इंडिया*.
http://www.telegraphindia.com/1090730/jsp/jharkhand/story_11287873.jsp

पदार्थों की मांग में बदलाव के कारण खनन कार्य अक्सर बाधित होते हैं। गर्मी के मौसम में अधिकतर खनन कार्य बंद हो जाते हैं, जिसके कारण मजदूरों को अन्य स्थानों पर रोजगार की तलाश में जाना पड़ता है।[28]

झारखंड, जो कभी कृषि प्रधान राज्य था, आज कृषि से दूर होता जा रहा है। जंगलों के विनाश, प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक दोहन और खनन-औद्योगिक गतिविधियों ने ग्रामीण अर्थव्यवस्था को बुरी तरह प्रभावित किया है। सूखा, अकाल और अनियमित वर्षा ने पारंपरिक खेती प्रणालियों को तहस-नहस कर दिया है। सिंचाई सुविधाओं का अभाव और आधुनिक खेती की बढ़ती लागत ने किसानों को मुश्किल में डाल दिया है। बड़े बांधों का पानी मुख्यतः औद्योगिक उपयोग के लिए जाता है, जिससे कृषि क्षेत्र उपेक्षित रह गया है। इन चुनौतियों के कारण, कई लोग यह मानने लगे हैं कि झारखंड खेती के लिए उपयुक्त नहीं रहा।[29] संजय बसु मालिक का मानना है कि झारखंड की मिट्टी और भूगर्भिक संरचना खेती के लिए उपयुक्त नहीं है, भले ही सिंचाई की कितनी भी व्यवस्था की जाए। राज्य का अधिकांश भाग पठारी है और पारंपरिक रूप से लोग खेती को पूरक व्यवसाय मानते हैं। झारखंड का कुल क्षेत्रफल 79.7 लाख हेक्टेयर है, जिसमें से केवल 18.04 लाख हेक्टेयर पर ही खेती होती है, जो कुल कृषि योग्य भूमि का मात्र 14.13% है। सिंचित भूमि और भी कम है, जो कुल बोए गए क्षेत्र का केवल 8% है। ये आंकड़े स्पष्ट करते हैं कि कृषि राज्य के लिए प्राथमिकता नहीं रही है।[30] इससे यह स्पष्ट होता है की औद्योगीकरण, खासकर खनन उद्योग, के कारण कृषि भूमि की उर्वरता लगातार कम हो रही है और भू-क्षरण की समस्या बढ़ रही है। खनन के बाद भूमि को समतल नहीं किया जाता, जिससे प्राकृतिक असंतुलन बढ़ता है।

[28] धात्री रिसोर्स सेंटर फॉर वीमेन एंड चिल्ड्रेन सेंटर-समता. (2010). *धूल में लथपथ देश का बचपन: भारत में बच्चों पर खनन उद्योग के प्रभावों का अध्ययन*. विशाखापत्तनम: धात्री रिसोर्स सेंटर फॉर वीमेन एंड चिल्ड्रेन सेंटर-समता

[29] शास्त्री, सीताराम. (2011, दिसंबर). अपना झारखंड. *अपना झारखंड*, 4, 5.

[30] मालिक बसु संजय,जनजाति समाज मे जमीन और जंगल,101

ISSN PRINT 2319 1775 Online 2320 7876
Research Paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved UGC CARE Listed (Group -I) Journal Volume 10, Iss 08, 2021

जनजातियों के समाजिकता और संस्कृति का क्षरण

खनन गतिविधियां जनजातियों के जीवन को मूल रूप से बदल देती हैं और उनकी सामाजिक-सांस्कृतिक पहचान को गहरा धक्का पहुंचाती हैं। जब जनजातियों को अपनी भूमि से विस्थापित किया जाता है, तो वे न केवल अपना घर और खेत खो देते हैं बल्कि अपनी सदियों पुरानी जीवनशैली और सामुदायिक बंधनों से भी कट जाते हैं। वासवी के अनुसार, यह विस्थापन न सिर्फ भौगोलिक बल्कि सांस्कृतिक रूप से भी एक गहरा घाव है। विस्थापन के परिणामस्वरूप, आदिवासी अपनी जड़ों से कट जाते हैं। वे अपनी पारंपरिक खेती, शिकार और जंगल से जुड़े ज्ञान को खो देते हैं। सामाजिक ताने-बाने में गहरा दरार पड़ जाती है, पारिवारिक बंधन कमजोर हो जाते हैं और सामुदायिक निर्णय लेने की प्रक्रिया बाधित होती है। अपनी संस्कृति से कटने के कारण, जनजाति अपनी पहचान खोने लगते हैं और मानसिक तनाव, चिंता और उदासी का शिकार हो जाते हैं। विस्थापन के कारण शिक्षा और स्वास्थ्य सुविधाओं तक पहुंच सीमित हो जाती है, जिससे उनकी अगली पीढ़ी का विकास भी प्रभावित होता है।[31]

खनन की शिकार जनजाति महिलाएं

खनन क्षेत्रों में महिलाएं सबसे अधिक प्रभावित होती हैं। खनन गतिविधियों के कारण उन्हें कई तरह की समस्याओं का सामना करना पड़ता है। खनन उद्योग में महिलाओं को आमतौर पर छोटे, निजी खदानों में ही रोजगार मिलता है और छंटनी के समय सबसे पहले इन्हें ही निकाला जाता है। 2009 में हैदराबाद में आयोजित एक संगोष्ठी में खनन का महिलाओं पर प्रभावों का विस्तृत अध्ययन किया गया था। इस अध्ययन में झारखंड जैसे कई राज्यों को शामिल किया गया था। अध्ययन के अनुसार, दुनिया भर में खनन गतिविधियों से महिलाओं, खासकर जनजाति समुदायों की महिलाओं पर गहरा नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। ये गतिविधियां न केवल मानव समाज बल्कि पारिस्थितिक तंत्र के लिए भी हानिकारक होती हैं।

[31] वासवी, ए. (2003). ताबेन जोमन जमीन का हिस्सा.पृ.199

ISSN PRINT 2319 1775 Online 2320 7876
Research Paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved UGC CARE Listed (Group -I) Journal Volume 10, Iss 08, 2021

पितृसत्तात्मक समाज में, खनन परियोजनाओं से विस्थापित होने के बाद महिलाओं के पास जमीन या प्राकृतिक संसाधनों पर कोई अधिकार नहीं रह जाता है। खनन के कारण महिलाओं की आर्थिक स्थिति खराब होती है, पारंपरिक खेती और वन उत्पादों पर निर्भरता खत्म हो जाती है। वे पूरी तरह से पुरुषों पर आर्थिक रूप से निर्भर हो जाती हैं। इसके अलावा, खनन से विस्थापित महिलाओं की जीवन शैली, सांस्कृतिक परंपराएं और बुनियादी सुविधाएं बुरी तरह प्रभावित होती हैं।[32] खानों में काम करने वाली महिलाओं को कई अन्य तरह की समस्याओं का सामना करना पड़ता है। वे अक्सर सुरक्षा उपकरणों के अभाव में गंभीर स्वास्थ्य खतरों से जूझती हैं, जिससे उनकी प्रजनन क्षमता प्रभावित होती है। यौन शोषण का खतरा भी हमेशा बना रहता है। महिलाओं को अक्सर घरेलू कामकाज, निर्माण कार्य जैसे कठिन और हाशिए के रोजगार मिलते हैं, या उन्हें वेश्यावृत्ति में धकेल दिया जाता है। ये सभी असंगठित क्षेत्र के रोजगार हैं और सामाजिक रूप से अपमानजनक हैं। कई क्षेत्रों में पत्नियों के साथ मारपीट, शराबखोरी, कर्ज, शारीरिक और यौन उत्पीड़न, वेश्यावृत्ति, बहुपत्नीत्व और पत्नियों को छोड़ देने जैसी कुरीतियाँ तेजी से बढ़ रही हैं। महिलाओं के खिलाफ अपराध लगातार बढ़ रहे हैं और शासन द्वारा इन पर कम ध्यान दिया जाता है, जिसके परिणामस्वरूप दोषियों को शायद ही कभी सजा मिलती है। खासकर, खनन प्रभावित क्षेत्रों में नाबालिग लड़कियों और महिलाओं के मानवाधिकारों का हनन चिंताजनक स्तर पर पहुंच गया है। कंपनियां अक्सर लोकतांत्रिक विरोध या आंदोलन को दबाने के लिए हिंसा का सहारा लेती हैं।[33]

खनन गतिविधियों का बच्चों पर प्रतिकूल प्रभाव

झारखंड में खनन गतिविधियों के कारण महिलाओं और बच्चों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। कई जनजाति बच्चे स्कूलों और मैदानों में पढ़ने और खेलने के बजाय, खराब परिस्थितियों में खानों में मजदूरी करने को मजबूर हैं। इससे इन बच्चों का सामाजिक, मानसिक और आर्थिक विकास बुरी तरह प्रभावित हो रहा है। 2010 में, धात्री रिसोर्से सेंटर फॉर वुमेन

[32] विस्तृत रूप से देख 2010 मे,धात्री रिसोर्से सेंटर फॉर वुमेन एंड चिल्ड्रेन द्वारा प्रकाशित 'धूल मे लथपथ' देश का बचपन भारत मे बच्चों पर खनन उद्योग के प्रभावों का अध्ययन

[33] वही

ISSN PRINT 2319 1775 Online 2320 7876
Research Paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved UGC CARE Listed (Group -I) Journal Volume 10, Iss 08, 2021

एंड चिल्ड्रेन द्वारा प्रकाशित 'धूल में लथपथ' रिपोर्ट में भारत में बच्चों पर खनन उद्योग के प्रभावों का अध्ययन किया गया है। इस रिपोर्ट के अनुसार, खनन गतिविधियों से प्रभावित बच्चों का विकास रुका हुआ है, खाद्य असुरक्षा बढ़ी है और कुपोषण की समस्या गहराई है। बाल मजदूरी में वृद्धि के साथ-साथ शोषण और उत्पीड़न के खतरे भी बढ़ गए हैं। खनन प्रभावित बच्चे न केवल शिक्षा के अधिकार से वंचित हैं बल्कि उनके पास जीवन की कोई सुरक्षा भी नहीं है। वे खानों में काम करते हैं या खनन गतिविधियों से जुड़े अन्य काम करते हैं। सरकार के लिए ये बच्चे लावारिस से कम नहीं हैं।[34]

आईएलओ एशिया प्रशांत क्षेत्रीय कार्यालय के प्रेस विज्ञप्ति "कोल्ड, डार्क एंड डेंजरस-एशियन चिल्ड्रेन एंड माइनिंग" में खनन से प्रभावित बच्चों की दयनीय स्थिति पर प्रकाश डाला गया है। विज्ञप्ति के अनुसार, ये ठंडी, अंधेरी और खतरनाक "अनधिकृत" व गैरकानूनी कोयला और सोने की खदानें बच्चों के लिए बिल्कुल भी उपयुक्त नहीं हैं। गरीबी और शिक्षा के अभाव के कारण, कई बच्चे इन खतरों का सामना करने को मजबूर हैं। कुछ खदानों में बच्चे 90 मीटर की गहराई तक काम करते हैं और उनके पास आने-जाने के लिए सिर्फ एक रस्सी होती है। इन गड्ढों में हवा और रोशनी का अभाव होता है। बच्चे सिर्फ फ्लैशलाइट या मोमबत्ती की रोशनी में काम करते हैं। छोटे खनन कार्यों में बच्चे चट्टानें खोदते हैं, नदियों में गोता लगाते हैं, सुरंगों में काम करते हैं, विस्फोटक लगाते हैं और संकरी सुरंगों से गुजरते हैं। खदानों में बच्चे मिट्टी, पत्थर और धूल निकालते हैं, उन्हें ढोते हैं और बड़ी चट्टानों को तोड़ते हैं। निर्माण कार्यों में बच्चे बड़े औजारों का उपयोग करते हैं।[35]

भूमि से बेदखलीकरण

भूमि न केवल आर्थिक सुरक्षा प्रदान करती है बल्कि यह सार्वजनिक सुरक्षा का भी एक महत्वपूर्ण स्रोत है। झारखंड के लोगों के लिए यह और भी खास है क्योंकि यह विरसा मुंडा और नीलांबर-पीतांबर जैसे नेताओं के नेतृत्व में भूमि के

[34] वही

[35] कोल्ड,डार्क एंड डेंजेरस-एशियन चिल्ड्रेन एंड माइनिंग

ISSN PRINT 2319 1775 Online 2320 7876
Research Paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved UGC CARE Listed (Group -I) Journal Volume 10, Iss 08, 2021

अधिकार के लिए हुए ऐतिहासिक संघर्षों का प्रतीक है।[36] इसलिए, जनजातियों का भूमि से एक गहरा भावनात्मक जुड़ाव है। इस संबंध में, ऑस्ट्रेलिया के एक जनजाति नेता ने जनजातियों और भूमि के बीच संबंध का एक अत्यंत सुंदर वर्णन किया है।[37]

"मेरी भूमि मेरा मेरुदंड है। मैं अपने रंग के बारे में सीधा, प्रसन्न और गर्व से खड़ा होता हूँ क्योंकि अभी भी मेरे पास भूमि है। मैं नृत्य, चित्रकारी, निर्माण और गायन कर सकता हूँ, ठीक वैसे ही जैसे मेरे पूर्वज करते थे। मेरी भूमि मेरा आधार है। मैं तभी तक खड़ा रह सकता हूँ, जीवित रह सकता हूँ और कुछ कर सकता हूँ जब तक मेरे पास खड़े रहने के लिए एक मजबूत और स्थिर आधार है। भूमि के बिना हम दुनिया में सबसे निचले स्तर के लोग होंगे क्योंकि तुमने हमारा मेरुदंड तोड़ दिया है, मेरा कल, इतिहास और आधार छीन लिया है। तुमने हमारे पास कुछ नहीं छोड़ा है।[38]

[36] पीयूसीएल, पीयूडीआर, एपीडीआर, एवं आईएपीएल. (2010). *आतंक के साये में आम झारखंडी*.

[37]राष्ट्रीय अनुसूचित जाति तथा जनजाति आयोग. (2001). छठी रिपोर्ट 1999-2000 एवं 2000-2001. राष्ट्रीय अनुसूचित जाति तथा जनजाति आयोग, भारत सरकार, नई दिल्ली. पृ. 149.

ISSN PRINT 2319 1775 Online 2320 7876
Research Paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved UGC CARE Listed (Group -I) Journal Volume 10, Iss 08, 2021

लेकिन कई बार खनन के नाम पर इन जनजातियों को उनकी भूमि से बेदखल हों पड़ता है। हालांकि झारखंड में जनजातियों को संवैधानिक तौर पर भूमि सुरक्षा प्रदान की गई है। भारतीय संविधान की पाँचवीं अनुसूची, जिसकी चर्चा हम पहले कर चुके हैं, के अतिरिक्त झारखंड में ऐसे कई कानून हैं जो खासकर भूमि सुरक्षा पर केंद्रित हैं, जैसे छोटानागपुर काश्तकारी कानून (सीएनटी एक्ट) 1908 और संथाल परगना काश्तकारी कानून (एसपीटी एक्ट) 1949। छोटानागपुर काश्तकारी कानून झारखंड के 24 जिलों में से 19 जिलों में लागू है। शुरुआती दौर में इन कानूनों के तहत जमीन की बिक्री बिल्कुल भी संभव नहीं थी, लेकिन समय के साथ-साथ इनमें संशोधन कर दिए गए। सीएनटी एक्ट की धारा 49 के अंतर्गत गैर-जनजातियों को 'सार्वजनिक उद्देश्यों' के लिए ही जमीन बेची जा सकती है। 1996 में हुए एक संवैधानिक संशोधन के बाद से 'सार्वजनिक उद्देश्यों' की सूची में से धार्मिक, शैक्षणिक आदि तो हटा दिए गए, परंतु खनन और अन्य औद्योगिक कार्य शामिल हैं। दूसरी सबसे महत्वपूर्ण बात यह भी है कि खनन उद्योगों में केवल खदानें ही शामिल नहीं होतीं, बल्कि सड़क, रेलवे लाइन, स्टील प्लांट, अन्य सहायक कारखाने, टाउनशिप आदि भी स्थापित हो जाते हैं जिससे प्रभावित भूमि खनन के लिए अधिकृत भूमि से कई गुना अधिक होती है।

खनन की चपेट मे पर्यावरण

झारखंड में खनिज उद्योग ने पर्यावरण को गंभीर रूप से प्रभावित किया है। इस क्षेत्र में खनन और खनिज प्रसंस्करण के कारण पर्यावरणीय असंतुलन पैदा हो गया है, जिसका सीधा असर स्थानीय लोगों पर पड़ा है। खनन गतिविधियों से मिट्टी, हवा और जल जैसे प्राकृतिक संसाधन तेजी से क्षतिग्रस्त हो रहे हैं। मृदा क्षरण, अम्लीय जल का रिसाव, विषैली गैसों का उत्सर्जन और भारी धातुओं का प्रदूषण पर्यावरण के लिए गंभीर खतरा बन गए हैं। भूमिगत खनन के कारण ऑक्सीजन की कमी, उच्च तापमान और आर्द्रता जैसी समस्याएं उत्पन्न होती हैं, जो प्राकृतिक संतुलन को बिगाड़ती हैं। विकास के नाम पर जंगलों और भूमि का अंधाधुंध दोहन और प्राकृतिक संसाधनों का अविवेकपूर्ण उपयोग पर्यावरण को नुकसान पहुंचा रहा है। खनन गतिविधियों में उचित तकनीक का अभाव और उद्योगों की ओर से पर्यावरणीय मुद्दों की अनदेखी भी इस समस्या को और गंभीर बना रही

ISSN PRINT 2319 1775 Online 2320 7876
Research Paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved UGC CARE Listed (Group -I) Journal Volume 10, Iss 08, 2021

निष्कर्षात्मक अवलोकन:

यह कहा जा सकता है कि खनिज-आधारित आर्थिक विकास ने झारखंड के जनजाति समुदाय को प्रभावित किया है। झारखंड की वर्तमान सामाजिक और आर्थिक स्थिति स्पष्ट रूप से दर्शाती है कि खनिज संपदा से समृद्ध होने के बावजूद, जनजाति गरीबी, भुखमरी, बेरोजगारी, विस्थापन, अशिक्षा, कुपोषण, भय, शोषण और नक्सलवाद जैसी समस्याओं से जूझ रहे हैं। हालांकि, भारत सरकार ने खनिज क्षेत्रों में ज़िला खनिज फाउंडेशन (DMF) जैसे कल्याणकारी कार्यक्रमों को शुरू किया है, जिनका उद्देश्य खनन से प्रभावित क्षेत्रों के विकास के लिए धन उपलब्ध कराना है। कभी वनों का राज्य कहलाने वाला झारखंड आज केवल 27.66% वन क्षेत्र के साथ पर्यावरणीय असंतुलन का सामना कर रहा है। यह स्थिति स्थानीय जनजातियों के जीवन को बुरी तरह प्रभावित कर रही है। जल, जंगल और जमीन, जो उनकी पहचान हैं, खनन गतिविधियों के कारण लगातार खतरे में हैं। राष्ट्रीय कानूनों में संशोधन के साथ-साथ सार्वजनिक खनन संस्थानों की क्षमता को भी मजबूत करना होगा। जनजातीय क्षेत्रों में खनिज संसाधनों के विकास के लिए एक ऐसा ढांचा बनाना होगा जो समुदाय, राज्य और निवेशकों के हितों का संरक्षण करे। इस ढांचे में पर्यावरणीय प्रभाव आकलन, पर्यावरण प्रबंधन योजनाओं और सामुदायिक विकास योजनाओं के लिए दिशानिर्देश शामिल होने चाहिए। साथ ही, स्थानीय और जनजाति समुदायों के साथ परामर्श करके भूमि उपयोग योजना, सामुदायिक विकास और लाभों के बंटवारे के लिए एक तर्कसंगत ढांचा तैयार किया जाना चाहिए। इसके अलावा, प्रगतिशील पुनर्वास और वनीकरण के साथ-साथ नामित वन क्षेत्रों के दोहरे उपयोग के लिए एक ढांचा भी तैयार किया जाना चाहिए। पर्यावरणीय और सामाजिक जोखिमों को कम करने के लिए मजबूत सरकारी संस्थागत संरचनाओं की भी आवश्यकता है। इन तथ्यों को ध्यान में रखते हुए हम इस निष्कर्ष पर पहुंच सकते हैं कि अपूर्णीय खनिज संपदा के उत्खनन के मामले में क्या, कब, कहाँ, कैसे और किसके द्वारा ये निर्णय लिए जाते हैं, इस पर पुनर्विचार करने की आवश्यकता है। हमें अपनी नदियों, झीलों और समुद्रों के निजीकरण के खिलाफ खड़े होने की तरह ही, दुनिया की खनिज संपदा को भी मानव जाति की साझा विरासत घोषित करने पर विचार करना चाहिए। इस प्रकार, खनिज संसाधन एक दोधारी तलवार की तरह हैं। वे अर्थव्यवस्था को मजबूत तो करते हैं, लेकिन स्थानीय समुदायों, खासकर

ISSN PRINT 2319 1775 Online 2320 7876
Research Paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved UGC CARE Listed (Group -I) Journal Volume 10, Iss 08, 2021

जनजातीय, के जीवन को नुकसान भी पहुँचाते हैं। इसलिए, खनिज संसाधनों के प्रबंधन में आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के बीच संतुलन बनाने की आवश्यकता है। खनिज संसाधन हमारे देश के लिए महत्वपूर्ण हैं, लेकिन इनका दोहन करते समय हमें जनजातियों के हितों का भी ध्यान रखना होगा। हमें एक ऐसे विकास मॉडल को अपनाने की जरूरत है जो आर्थिक विकास और पर्यावरण संरक्षण के साथ-साथ सामाजिक न्याय को भी सुनिश्चित करे, खासतौर पर जनजातीय अधिकारों का सम्मान किया जाना चाहिए।

संदर्भ:

1) अरीपरमपिल, मैथ्यू. (1996, जून). *डिस्प्लेस्मेंट ड्यू टू माइनिंग इन झारखंड*. इकोनॉमिक एंड पोलिटिकल वीकली, 31(24), 1521-1528
2) आयोग, एन. आई. टी. आई. (2021). नेशनल मल्टीडायमेंशनल पॉवर्टी इंडेक्स–अ प्रोग्रेस रिव्यू 2021. नई दिल्ली.
3) एक्का, ए. (2011). स्टेट्स ऑफ़ आदिवासी/इंडिजीनियस , लैंड सीरिज़ -4. आकार बुक्स.
4) एक्का, ए., और आसिफ, एम. (2000). *डेवलपमेंट इंड्यूस्ड डिस्प्लेसमेंट एंड रेहैबिलिटेशन, झारखंड 1951–1995: ए डेटाबेस ऑन इट्स एक्सटेंट एंड नेचर*. इंडियन सोशल इंस्टीट्यूट.
5) ऑटी, आर. (1993). सस्टेनिंग डेवलपमेंट इन मिनरल इकॉनमिज: द रिसोर्स कर्स थेसिस. राउटलेज, लंदन.
6) कल्शियान, आर. (2008). प्रस्तावना. आर. कल्शियान (सं.), *बुलडोजर और महुआ के फूल: भारत के खदानों में उथल-पुथल* (पृ. 4). पनोस साउथ एशिया.
7) कोहली, ए. (2006). पॉलिटिक्स ऑफ़ इकोनॉमिक ग्रोथ इन इंडिया, 1980-2005. इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, 1251-1259
8) डायश, ज़ेवियर. (2008). पीली खल्ली काली करतूत. इन आर. कल्शियान (सं.), बुलडोजर और महुआ के फूल: भारत के खदानों में उथल-पुथल (पृ. 135). पनोस साउथ एशिया.
9) दुबे, अभय. (2017). भारत का भूमंडलीकरण. वाणी प्रकाशन: दिल्ली.
10) धात्री रिसोर्स सेंटर फॉर वीमेन एंड चिल्ड्रेन सेंटर-समता. (2010). *धूल में लथपथ देश का बचपन: भारत में बच्चों पर खनन उद्योग के प्रभावों का अध्ययन*. विशाखापत्तनम. पृ.23
11) पीयूसीएल, पीयूडीआर, एपीडीआर, एवं आईएपीएल. (2010). *आतंक के साये में आम झारखंडी*.

ISSN PRINT 2319 1775 Online 2320 7876
Research Paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved UGC CARE Listed (Group -I) Journal Volume 10, Iss 08, 2021

12) प्रकाश, अमित. (2001). *झारखंड पॉलिटिक्स ऑफ डेव्लपमेंट: आईडिंटिटी*. (पृ. 228).

13) प्रणब,बर्धन.(1992) ए पॉलिटिकल इकॉनमी पर्सपेक्टिव ऑन डेव्लपमेंट इन बिमल जलान (स०)इंडियन इकॉनमी: प्रॉब्लम्स एंड प्रोस्पेक्ट, पेंग्विन,नई दिल्ली पृ.325

14) फर्नांडिस, वाल्टर और एंथनी राज. (1992). डेवलपमेंट, डिस्प्लेस्मेंट एंड रिहैबिलिटेशन इन द ट्राइबल एरिया ऑफ़ उड़ीसा. नई दिल्ली: भारतीय सामाजिक संस्थान

15) बाविस्कर, अमिता. (1999). इन द बेली ऑफ द रिवर: ट्राइबल कॉन्फ्लिक्ट ओवर डेवलपमेंट इन द नर्मदा वैली. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.

16) मालिक बसु संजय,जनजाति समाज मे जमीन और जंगल,101

17) मैथ्यू, सी. के., दत्ता, यू., नारायणन, ए., और जलोडिया, एस. (2017). *पब्लिक अफेयर्स इंडेक्स: भारत के राज्यों में शासन व्यवस्था*. बेंगलुरु: पब्लिक अफेयर्स सेंटर.

18) राष्ट्रीय अनुसूचित जाति तथा जनजाति आयोग. (2001). छठी रिपोर्ट 1999-2000 एवं 2000-2001. राष्ट्रीय अनुसूचित जाति तथा जनजाति आयोग, भारत सरकार, नई दिल्ली. पृ. 149.

19) लिटलवुड, डी. (2014). 'कर्स्ड' कम्युनिटीज? कॉर्पोरेट सोशल रिस्पॉन्सिबिलिटी (CSR), 286 कंपनी टाउन और नामीबिया में माइनिंग इंडस्ट्री. जर्नल ऑफ बिजनेस एथिक्स, 120, 39-63. DOI:10.1007/s10551-013-1649-7

20) वार्ष्णेय, आशुतोष. (1998). मास पॉलिटिक्स और इलीट पॉलिटिक्स? इंडियाज़ इकोनॉमिक रिफॉर्म्स इन कंपैरेटिव परस्पेक्टिव. *पॉलिसी रिफॉर्म जर्नल*, 2(4), 301-335.

21) वासवी, (2003). *ताबेन जोमन जमीन का हिस्सा*. हरियाणा: आधार प्रकाशन. पृ.

22) विद्या, भूषण. (2000). *झारखंड समाज, संस्कृति और विकास*. प्रकाशन संस्थान. नई दिल्ली.

23) व्हिटमोर, ए. (2006). द एम्परर'स न्यू क्लोथ्स: सस्टेनेबल माइनिंग? जर्नल ऑफ क्लीनर प्रोडक्शन, 14, 309-314. DOI:10.1016/j.jclepro.2004.10.005

24) शास्त्री, सीताराम. (2011, दिसंबर). अपना झारखंड. *अपना झारखंड*, 4, 5.

25) साबू, एस. (2009). माइन वर्कर्स प्रोन टू एड्स. *टेलीग्राफ इंडिया*. http://www.telegraphindia.com/1090730/jsp/jharkhand/story_11287873.jsp

26) सेन, राहुल. (1992). ट्राइबल पॉलिसी ऑफ इंडिया. *इंडियन एंथ्रोपोलॉजिस्ट*, 22(2), 77-89.

ISSN PRINT 2319 1775 Online 2320 7876
Research Paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved UGC CARE Listed (Group -I) Journal Volume 10, Iss 08, 2021

27) सैक्स, जे. डी., & वॉर्नर, ए. एम. (1995). नेचुरल रिसोर्स अबंडेंस एंड इकोनॉमिक ग्रोथ (एनबीईआर वर्किंग पेपर नं. 5398). नेशनल ब्योरो ऑफ इकोनॉमिक रिसर्च. और लेन, पी. आर., & टॉर्नेल, ए. (1996). पावर, ग्रोथ, एंड द वोरसिटी इफेक्ट. *जर्नल ऑफ इकोनॉमिक ग्रोथ*, 1(2), 213-241.

28) https://www.sciencedirect.com/science/article/abs/pii/S030142071830401X#preview-section-abstract